P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-III*November-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भाववाच्य में संस्कृत–व्याकरण–सम्मत पुरुष व वचन की व्यवस्था

विनोद कुमार झा
अध्यक्ष,
व्याकरण विभाग,
श्री सोमनाथ संस्कृत यूनिवर्सिटी,
वेरावल, गुजरात

सारांश

"लः कर्मणि च भावे चाऽकर्मकेभ्यः" सूत्र में लकारों के तीन अर्थ बताये गये हैं– कर्त्ता, कर्म और भाव। सकर्मक धातुओं से लकार कर्त्ता एवं कर्म अर्थ में तथा अकर्मक धातुओं से लकार कर्त्ता एवं भाव अर्थ में होते हैं। कर्त्ता अर्थ में लकार होने पर कर्तृवाच्य होता है। कर्तृवाच्य में कर्ता में प्रथमा विभक्ति, कर्म में द्वितीया विभक्ति और क्रिया में कर्ता के अनुसार पुरुष व वचन होते हैं। कर्मवाच्य में कर्म में प्रथमा विभक्ति, कर्ता में तृतीया विभक्ति और क्रिया में कर्म के अनुसार पुरुष व वचन होते हैं। भाववाच्य में कर्म नहीं होता है, अतः इस वाच्य में कर्ता में तृतीया विभक्ति और क्रिया में पुरुषों में केवल प्रथम पुरुष व वचनों में केवल एकवचन होते हैं। प्रस्तुत शोध लेख में भाववाच्य के नियम को सूत्रनिर्देशपूर्वक तथा उदाहरण प्रस्तुतिपूर्वक विस्तार से बताया जायेगा।

मुख्य शब्द : आत्मनेपद, परस्मैपद, युष्मद्, अस्मद्, उपपद, समानाधिकरण, स्थानिन्, अपि, शेष।

प्रस्तावना

"लः कर्मणि च भावे चाऽकर्मकेभ्यः"[1] सूत्र में लकारों के तीन अर्थ बताये गये हैं– कर्त्ता, कर्म और भाव। सकर्मक धातुओं से लकार कर्त्ता एवं कर्म अर्थ में तथा अकर्मक धातुओं से लकार कर्त्ता एवं भाव अर्थ में निहित होते हैं। 'भाव' तथा 'कर्म' अर्थ में लकार होने पर 'आत्मनेपद' का विधान होता है। भाववाच्य ('भाव' अर्थ) में तथा कर्मवाच्य ('कर्म' अर्थ) में परस्मैपद होता ही नहीं है। फिर चाहे धातु परस्मैपदी हो, आत्मनेपदी हो या उभयपदी हो, इन दोनों वाच्यों में प्रत्येक धातु से पर लकार के स्थान में 'आत्मनेपद' का ही विधान किया जाता है, परस्मैपद का नहीं। 'भाव' तथा 'कर्म' अर्थ में धातु से 'यक्' विकरण होता है। 'यक्' में अन्त्य हल् ककार की इत्संज्ञा व लोप हो जाता है तथा 'य' सस्वर शेष रहता है। 'यक्' में ककार अनुबन्ध जोड़ने का प्रयोजन है– गुण, वृद्धि का निषेध और सम्प्रसारण करना। जैसे– 'भूयते' में 'यक्' के कित् होने के कारण 'भू' को "सार्वधातुकाऽऽर्धधातुकयोः"[2] सूत्र से प्राप्त आर्धधातुकगुण का निषेध हो जाता है। इसी प्रकार 'मृज्यते' में 'यक्' के कित् होने के कारण "मृजेर्वृद्धिः"[3] सूत्र से प्राप्त वृद्धि का निषेध हो जाता है। 'इज्यते' प्रयोग में 'यक्' के कित् होने के कारण 'यज' धातु के यण्– 'य' को "वचिस्वपियजादीनां किति"[4] सूत्र से सम्प्रसारण 'इ' हो जाता है।

भावः क्रिया, सा च भावार्थकलकारेणाऽनूद्यते। युष्मदस्मद्भ्यां सामानाधिकरण्याऽभावात् प्रथमः पुरुषः। तिङ्वाच्यक्रियाया अद्रव्यरूपत्वेन द्वित्वाद्यप्रतीतेर्न द्विवचनादि। किन्त्वेकवचनमेवोत्सर्गतः। त्वया मयाऽन्यैश्च भूयते। बभूवे।

अर्थात् भाव का अर्थ क्रिया है। 'भाव' अर्थ में लकार करने पर भावार्थक लकार के द्वारा धात्वर्थ क्रिया का ही अनुवाद (फिर से कहना) किया जाता है। 'भाव' अर्थ में लकार करने पर 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' शब्द का अर्थ कर्ता/कर्म के साथ लकार का अर्थ 'भाव' का समानाधिकरण (समान अर्थ) नहीं होने से भावार्थक लकार के स्थान में केवल 'प्रथम पुरुष' ही होता है। तिङ् (लकार) का अर्थ क्रिया, द्रव्य रूप नहीं होती है। उसका कोई मूर्त रूप नहीं होता है। अतः क्रिया से संख्या की प्रतीति नहीं होने से द्वित्वादि की विवक्षा भी नहीं होती है, और न ही द्विवचन आदि होते हैं। एकवचन अनैमित्तिक (बिना निमित्त वाला) है। एकवचन एकत्व संख्या की अपेक्षा नहीं रखता है, इसलिए एकत्व की अविवक्षा में भी स्वभावतः एकवचन हो जाता है। जैसे–त्वया, मया अन्यैश्च भूयते (तुझ से, मुझ से या अन्य लोगों से हुआ जाता है)।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-III*November-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भावः क्रिया, सा च भावार्थकलकारेणाऽनूद्यते– भाववाच्य में अर्थात् भाव अर्थ में लकार करने पर लकार के द्वारा धात्वर्थ=भाव=क्रिया का ही अनुवाद किया जाता है अर्थात् धातु, जिस क्रिया को कहती है, उसी क्रिया को लकार भी कहता है। अब प्रश्न उठता है कि जो क्रिया, धातु के द्वारा कही जाती है, उसी क्रिया को भावार्थक लकार के द्वारा कहने की क्या आवश्यकता? इसका उत्तर यह है कि स्पष्ट प्रतिपत्ति = ज्ञान के लिए धात्वर्थ = क्रिया का लकार अनुवाद (दोहराना) करता है।

युष्मदस्मद्भ्यां सामानाधिकरण्याऽभावात् प्रथमः पुरुषः–'भाव' अर्थ में लकार करने पर 'युष्मद्' तथा 'अस्मद्' शब्द के साथ लकार के अर्थ का समानाधिकरण (एक अर्थ) नहीं होने से भावार्थक लकार के स्थान में हमेशा 'प्रथम पुरुष' ही होता है।

अभिप्राय यह है कि "युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः" सूत्र से लकार के साथ समान= एक अधिकरण=अर्थ वाला 'युष्मद्' शब्द यानि कि लकार का जो अधिकरण=अर्थ है, वही अधिकरण= अर्थ 'युष्मद्' शब्द का भी हो तो, 'युष्मद्' शब्द उपपद (समीप) में उच्चरित रूप से विद्यमान न हो अथवा विद्यमान हो, दोनों ही परिस्थितियों में 'मध्यम पुरुष' होता है।

"युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः"[5] सूत्र का शब्दार्थ– समानाधिकरणे– समानम्=एकम् अधिकरणं=वाच्यं (अर्थः) यस्य तत् समानाधिकरणम् (बहुव्रीहि समास), तस्मिन् समानाधिकरणे अर्थात् लकार के साथ समान=एक है, अधिकरण=अर्थ जिसका ऐसे युष्मदि=युष्मद्–शब्दे– युष्मद् शब्द के उपपदे=उपपद (समीप) में उच्चरित होने पर स्थानिनि=विद्यमान न रहने पर या अपि=विद्यमान रहने पर मध्यमः=मध्यम पुरुष होता है। यथा–

सकर्मक (गम्) धातु से 'कर्ता' अर्थ में लकार

मध्यम पुरुष
त्वं ग्रामं गच्छसि (तुम गाँव जाते हो)।

'युष्मद्' शब्द (त्वम्) का अर्थ =कर्ता

गच्छसि में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्ता

त्वं ग्रामं गच्छसि इस उदाहरण वाक्य में 'युष्मद्' (त्वम्) शब्द का अर्थ= कर्त्ता है एवं 'गच्छसि' में 'लँट् लकार' का भी अर्थ = कर्त्ता है, अतः 'गच्छसि' में "युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः" सूत्र से 'गम' धातु से 'मध्यम पुरुष' हुआ है।

सकर्मक (दृश्) धातु से 'कर्म' अर्थ में लकार

मध्यम पुरुष
मया त्वं दृश्यसे (मेरे द्वारा तुम देखे जाते हो)।

'युष्मद्' शब्द (त्वम्) का अर्थ=कर्म

दृश्य से में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्म

मया त्वं दृश्यसे इस उदाहरण वाक्य में 'युष्मद्' (त्वम्) शब्द का अर्थ=कर्म है एवं 'दृश्यसे' में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्म है, अतः 'दृश्यसे' में "युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः" सूत्र से 'दृश' धातु से 'मध्यम पुरुष' हुआ है।

"अस्मद्युत्तमः" सूत्र से लकार के साथ समान=एक अधिकरण=अर्थ वाला 'अस्मद्' शब्द यानि कि लकार का जो अधिकरण=अर्थ है, वही अधिकरण=अर्थ 'अस्मद्' शब्द का भी हो तो, 'अस्मद्' शब्द उपपद (समीप) में उच्चरित रूप से विद्यमान न हो अथवा विद्यमान हो, दोनों ही परिस्थितियों में 'उत्तम पुरुष' होता है।

"अस्मद्युत्तमः"[6] सूत्र का शब्दार्थ– समानम्=एकम् अधिकरणं=वाच्यं यस्य तत् समानाधिकरणम् (बहुव्रीहि समास), तस्मिन् समानाधिकरणे अर्थात् लकार के साथ समान=एक है, अधिकरण=अर्थ जिसका ऐसे अस्मदि= अस्मद्–शब्दे– अस्मद् शब्द के उपपदे=उपपद (समीप) में उच्चरित होने पर स्थानिनि=विद्यमान न रहने पर या अपि=विद्यमान रहने पर उत्तमः=उत्तम पुरुष होता है।

विशेष

"अस्मद्युत्तमः" सूत्र में "युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः" सूत्र से उपपदे, समानाधिकरणे, स्थानिनि तथा अपि इन चारों पदों की अनुवृत्ति आती है।

सकर्मक (गम्) धातु से 'कर्ता' अर्थ में लकार

उत्तम पुरुष
अहं ग्रामं गच्छामि (मैं गाँव जाता हूँ)।

'अस्मद्' शब्द (अहम्) का अर्थ=कर्ता

गच्छामि में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्ता

अहं ग्रामं गच्छामि इस उदाहरण वाक्य में 'अस्मद्' (अहम्) शब्द का अर्थ=कर्ता है एवं 'गच्छामि' में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्ता है, अतः 'गच्छामि' में "अस्मद्युत्तमः" सूत्र से 'गम्' धातु से 'उत्तम पुरुष' हुआ है।

सकर्मक (दृश्) धातु से 'कर्म' अर्थ में लकार

उत्तम पुरुष

त्वया अहं दृश्ये (तुम्हारे द्वारा मैं देखा जाता हूँ)।

'अस्मद्' शब्द (अहम्) का अर्थ=कर्म

दृश्ये में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्म

त्वया अहं दृश्ये इस उदाहरण वाक्य में 'अस्मद्' (अहम्) शब्द का अर्थ=कर्म है एवं 'दृश्ये' में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्म है, अतः 'दृश्ये' में "अस्मद्युत्तमः" सूत्र से 'दृश्' धातु से 'उत्तम पुरुष' हुआ है।

"शेषे प्रथमः" सूत्र से लकार के साथ समान=एक अधिकरण = अर्थ वाला शेष अर्थात् 'युष्मद्' एवं 'अस्मद्' शब्द से भिन्न 'तद्' आदि शब्द यानि कि लकार का जो अधिकरण=अर्थ है, वहीं अधिकरण = अर्थ 'तद्' आदि शब्दों का भी हो तो, 'तद्' आदि शब्द उपपद (समीप) में उच्चरित रूप से विद्यमान न हो अथवा विद्यमान हो, दोनों ही परिस्थितियों में 'प्रथम पुरुष' होता है।

"शेषे प्रथमः"[7] सूत्र का शब्दार्थ–समानम् = एकम् अधिकरणं=वाच्यं यस्य तत् समानाधिकरणम् (बहुव्रीहि समास), तस्मिन् समानाधिकरणे अर्थात् लकार के साथ समान=एक है, अधिकरण=अर्थ जिसका ऐसे शेषे = शेष–शब्दे– 'युष्मद्' एवं 'अस्मद्' शब्द से भिन्न 'तद्' आदि शब्द के उपपदे=उपपद (समीप) में उच्चरित होने पर स्थानिनि=विद्यमान न रहने पर या अपि=विद्यमान रहने पर प्रथमः=प्रथम पुरुष होता है।

विशेष

1. "शेषे प्रथमः" सूत्र में "युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः" सूत्र से उपपदे, समानाधिकरणे, स्थानिनि तथा अपि इन चारों पदों की अनुवृत्ति आती है।
2. उक्ताद् अन्यः शेषः– अर्थात् कहे गये 'युष्मद्' एवं 'अस्मद्' शब्द से भिन्न 'तद्' आदि शब्द।

अकर्मक (भू) धातु से 'कर्ता' अर्थ में लकार

प्रथम पुरुष

सः/सा/तत् भवति (वह होता/होती है)।

'तद्' शब्द (सः/सा/तत्) का अर्थ=कर्ता

भवति में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्ता

सः/सा/तत् भवति इस उदाहरण वाक्य में 'युष्मद्' एवं 'अस्मद्' शब्द से भिन्न 'तद्' (सः/सा/तत्) शब्द का अर्थ=कर्ता है एवं 'भवति' में 'लँट् लकार' का भी अर्थ=कर्त्ता है, अतः 'भवति' में "शेषे प्रथमः" सूत्र से 'भू' धातु से 'प्रथम पुरुष' हुआ है।

अकर्मक (भू) धातु से 'भाव' अर्थ में लकार

प्रथम पुरुष

अन्यैः/त्वया/मया भूयते (अन्य लोगों के द्वारा, तुम्हारे द्वारा अथवा मेरे द्वारा हुआ जाता है)।

'अन्य' शब्द (अन्यैः), 'युष्मद्' शब्द (त्वया), 'अस्मद्' शब्द (मया) का अर्थ= कर्त्ता

भूयते में 'लँट् लकार' का अर्थ=भाव

अन्यैः/त्वया/मया‡ भूयते इस उदाहरण वाक्य में अन्य, युष्मद् या अस्मद् (अन्यैः, त्वया अथवा मया) शब्द का अर्थ=कर्त्ता है तथा 'भूयते' में 'लँट् लकार' का अर्थ=भाव है, अतः लकार का अर्थ 'भाव' के साथ अन्य, युष्मद् या अस्मद् शब्द का अर्थ 'कर्तृता' का समानाधिकरण अर्थात् समान=एक अधिकरण=अर्थ नहीं होने से 'भूयते' में "शेषे प्रथमः" सूत्र से 'भू' धातु से 'प्रथम पुरुष' हुआ है।

‡अन्यैः/त्वया/मया भूयते इस वाक्य में 'भूयते' में 'भू' धातु से 'भाव' अर्थ में 'लँट्' लकार होने से 'लँट्' लकार के द्वारा 'भाव' अर्थ उक्त अर्थात् कहा गया है न कि अन्य, युष्मद् या अस्मद् शब्द का अर्थ– कर्ता। अतः 'कर्ता' अर्थ के अनुक्त होने से अर्थात् न कहे गये होने से अनुक्त कर्तृवाचक शब्द अन्य, युष्मद् तथा अस्मद् में "कर्तृकरणयोस्तृतीया" सूत्र से 'तृतीया' विभक्ति होती है।

तिङ्वाच्यक्रियाया अद्रव्यरूपत्वेन द्वित्वाद्यप्रतीतेर्न द्विवचनादि– 'लिङ्गसंख्यान्वयित्वं द्रव्यत्वम्' अर्थात् लिङ्ग एवं संख्या से जो युक्त होता है, वह द्रव्य कहलाता है। तिङ् (लकार)[&] का वाच्य क्रिया द्रव्य रूप नहीं होती है। उसका कोई मूर्त रूप नहीं होता है। अतः क्रिया से संख्या की प्रतीति नहीं होने से द्वित्वादि की विवक्षा भी नहीं होती है, और न ही द्विवचन आदि होते हैं।

& क. परमलघुमञ्जूषायां शक्ति–निरूपणस्य प्रारम्भे– 'तत्र ऋषिभिः स्थानिनां कल्पिता अर्थाः कण्ठरवेणैवोक्ताः। आदेशानां तु स्थान्यर्थाभिधानसमर्थस्यैवादेशतेति' अर्थात् स्थानी और

आदेश में पाणिनि आदि ऋषियों ने लकार आदि स्थानियों के कल्पित अर्थ कण्ठस्वर से ही कह दिये हैं, यानि कि स्थानियों के अर्थों का निर्देश स्वयं उच्चारणपूर्वक बतला दिया गया है। किन्तु आदेशों में आदेशता तो स्थानियों के कल्पित अर्थ को कहने में समर्थ होने से ही आती है, क्योंकि आदेश वहीं कहलाता है, जो स्थानी के अर्थ को कहने में समर्थ हो।

ख. परमलघुमञ्जूषायां लकारार्थ–निर्णयस्य प्रारम्भे– 'उच्चारित एव शब्दोऽर्थप्रत्यायको नानुच्चारितः' इति भाष्यात् अर्थात् 'उच्चारित शब्द ही अर्थ का बोधक होता है अनुच्चारित शब्द नहीं' इस भाष्य वचन से वास्तव में लकार के स्थान में होने वाले आदेश 'तिङ्' के ही कर्ता, कर्म व भाव अर्थ होते हैं। जहाँ कहीं लकार के कर्ता, कर्म व भाव अर्थ बताये गये हैं, वहाँ आदेश 'तिङ्' के अर्थ का स्थानी लकार में आरोप समझना चाहिये।

किन्त्वेकवचनमेवोत्सर्गतः– भाष्यकार के अनुसार एकवचन अनैमित्तिक (बिना निमित्त वाला) तथा औत्सर्गिक (स्वाभाविक) होता है। वह एकत्व संख्या की अपेक्षा नही रखता है, इसलिए एकत्व की अविवक्षा में भी एकवचन हो जाता है। साथ ही द्वित्वादि के अभाव में भी एकवचन सर्वत्र निर्बाध रूप से हो सकता है।

विशेष

1. भाववाच्य में धातु का वाच्य=अर्थ भाव (क्रिया) लकार के द्वारा कहा जाता है, युष्मद् या अस्मद् शब्द का अर्थ कर्ता अथवा कर्म नहीं, अतः इस वाच्य में मध्यम एवं उत्तम पुरुष का प्रयोग नहीं होता है। केवल "शेषे प्रथमः" सूत्र से प्रथम पुरुष का ही प्रयोग होता है।
2. भाववाच्य में लकार के द्वारा धात्वर्थ क्रिया का अनुवाद किया जाता है। क्रिया के द्रव्य रूप में न होने से उसका कोई मूर्त्त रूप नहीं होता है, इसलिए उसमें संख्या की प्रतीति भी नहीं होती है। संख्या का प्रयोग न होने से द्विवचन एवं बहुवचन का प्रयोग भी नहीं होता है। भाष्यकार ने एकवचन को अनैमित्तिक तथा औत्सर्गिक माना है, इसलिए वह एकत्व संख्या की अपेक्षा नहीं करता है और द्वित्वादि के अभाव में भी निर्बाध रूप से सभी जगह हो जाता है।[$] इसलिए भाववाच्य में केवल एकवचन का ही प्रयोग होता है।

$"द्व्येकयोर्द्विववचनैकवचने" (1/4/22) सूत्र का योगविभाग करके 'एकवचनम्', 'द्वयोर्द्विववचनम्' और बाद में 'बहुषु बहुवचनम्' इस प्रकार पाठ करके एकवचन को निर्निमित्तक (बिना निमित्त वाला) सिद्ध किया जाता है। 'एकवचनम्'– प्रत्येक शब्द से एकवचन होता है। 'द्वयोर्द्विववचनम्'– द्वित्व की विवक्षा में द्विवचन होता है। 'बहुषु बहुवचनम्'– बहुत्व की विवक्षा में बहुवचन होता है। इस प्रकार संख्या के अभाव में एकवचन का औत्सर्गिकत्व=स्वाभाविकत्व सिद्ध हो जाता है।[8]

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध लेख का उद्देश्य यह है कि भाववाच्य का जो नियम सर्वविदित है कि कर्ता में तृतीया विभक्ति और क्रिया में प्रथम पुरुष व एकवचन होते हैं, इसके पीछे जो वास्तविक कारण है, जो संस्कृत–व्याकरण–सम्मत कारण है, उसका सूत्रनिर्देशपूर्वक तथा उदाहरण प्रस्तुतिपूर्वक विस्तार से तत्त्वतः पाठकों को ज्ञान हो। पाठकों को न केवल भाववाच्य का अपितु प्रसंगतः इस शोध लेख में कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य का भी यथातथ्य व यथाविस्तृत चर्चा होने से भाववाच्य के साथ–साथ इन दोनों वाच्यों का भी तथ्यात्मक ज्ञान होगा।

निष्कर्ष

उपर्युक्त शोध लेख के निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि भाववाच्य के साथ–साथ कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य का भी यथातथ्य ज्ञान होने से छात्र–छात्राओं में संस्कृत–व्याकरण के प्रति रुचि के साथ–साथ श्रद्धा व विश्वास का भाव उत्पन्न होगा। वाच्यों का तत्त्वतः ज्ञान होने से किस धातु से भाववाच्य, किस धातु से कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य के वाक्य बन सकते हैं, इसका सप्रमाण, तर्कयुक्त, सन्देह रहित और सन्तुष्टिपरक ज्ञान होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पा. अ. सूत्र[#]– 3/4/69
2. पा. अ. सूत्र– 7/3/84
3. पा. अ. सूत्र– 7/2/114
4. पा. अ. सूत्र– 6/1/15
5. पा. अ. सूत्र– 1/4/104
6. पा. अ. सूत्र– 1/4/106
7. पा. अ. सूत्र– 1/4/107
8. वैयाकरणभूषणसार के भैमीभाष्य से उद्धृत।

पाणिनीय–अष्टाध्यायी–सूत्रपाठः